विश्व विकास

श्री अरविन्द आध्यात्मिक विकासवाद का प्रतिप्रदान करते हैं। सृष्टि और विकास, ये दो ईश्वरीरय प्रक्रियाएँ है। सृष्टि का तात्पर्य है, ईश्वर (अतिमानस) का जड़ एवं निम्न तत्त्वों में अन्तर्लीन होना। विकास, जड़ से आध्यात्मिक एवं अतिमानसिक अभिव्यक्ति या प्रकाशन की प्रक्रिया है। सर्वप्रथम, 'सच्चिदानन्द' 'जड़ तत्त्व' का रूप ग्रहण करता है जो चेतना का चरम निषेध प्रतीत होता है। चेतना जड़ तत्त्व में अप्रकट रहती है।

सच्चिदानन्द और जड़ तत्त्व में कोई विरोध नहीं है। सृष्टि प्रक्रिया में सच्चिदानन्द प्रथमतः जड़ में संवृत होता है। यदि हम सच्चिदानन्द और जड़ तत्त्व के बीच विभिन्न सत्ताओं पर ध्यान दें तब उनमें कोई भेद नहीं रह जाता है। उनके बीच जीवन, मन, आत्मा, उच्चतर चेतना, आलोकित चेतना, संबोधी, अधिमानस और अतिमानस का अस्तित्व है। ये तत्त्व विश्व-विकास में क्रमशः अभिव्यक्त एवं सृजित होते हैं।

सच्चिदानन्द की प्रथम सृष्टि जड़ से आरम्भ होती है। सूर्य, पृथ्वी, जल, अग्नि, इत्यादि, से जगत् निर्मित है। विश्व के विकास में 'जीवन' तत्त्व का बाद में सृजन होता है। वनस्पति एवं पशु में जीवन तत्त्व का सृजन पाते हैं। जैविक तत्त्व के विकास के पश्चात् चेतन तत्त्व, जैसे 'मानस' का सृजन होता है। मानसिक चेतना पशुओं में अस्पष्ट तथा मनुष्य में अभिव्यक्त रहती है। मानस द्वारा ही बुद्धि, विवेक, अनुमान, अनुसंधान, इत्यादि, संभव होते हैं।

बुद्धि और तर्क के सोपान के द्वारा मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है। फिर भी उसका ज्ञान सीमित रहता है। बुद्धि हमें भ्रान्तिपूर्ण ज्ञान प्रदान करती है। हमें वस्तु का साक्षात् ज्ञान नहीं सुलभ है, अपितु अनेक माध्यमों से जैसे, स्नायु,

Scanned by TapScanner

माँसपेशी, प्रकाश तथा शारीरिक अवस्था से प्रत्यक्ष ज्ञान उपलब्ध होता है। यथार्थ सत्ता की हमें चेतना नहीं होती है। हमारा सम्पूर्ण ज्ञान हमारे मानस के सीमित उपकरण पर आधारित रहता है। यह अत्यल्प ज्ञान प्राप्त करता है और पूर्ण तथ्य इसकी समझ के बाहर ही रहता है। बुद्धि, चाहे कितनी भी अनुशासित तथा प्रशिक्षित क्यों न हो, इसके निर्णय सापेक्ष ज्ञान प्रदान करते हैं जो सभी समय में युक्तिसंगत तथा सत्य नहीं होते हैं। हमारा ज्ञान सीमित है, और इसमें स्थायित्व नहीं है। हम सर्वज्ञ नहीं हैं। जब मनुष्य में आध्यात्मिक चेतना का अविर्भाव होता है तब शरीर, जीवन एवं मन का आध्यात्मिक रूपान्तर होता है। किन्तु आध्यात्मिक चेतना एवं शक्तियों से युक्त होने पर भी मनुष्य अज्ञान में ही रहता है। मनुष्य में दिव्य चेतना के आविर्भाव के साथ अज्ञान क्रमशः दूर होता जाता है। किन्तु आध्यात्मिक व्यक्ति भी अज्ञान से मुक्त नहीं है। चेतना के आध्यात्मिक वर्गों को दिव्य चेतना में रूपान्तरित होना शेष रहता है। जब हम विभिन्न सिद्ध पुरुषों की रहस्यानुभूति का विश्लेषण करते हैं, तब हम पाते हैं कि उनमें से कुछ निम्न स्तर के हैं और कुछ उच्च स्तर के हैं। आध्यात्मिक चेतना की श्रेणियों में अज्ञान का अवशेष रहता है। मानस से श्रेष्ठ चेतना में आरोहण के साथ हम क्रमशः दिव्य चेतना को प्राप्त करते हैं। आध्यात्मिक व्यक्ति का अतिमानव में सर्वश्रेष्ठ रूपान्तर होता है। अतिमानव का दिव्य चेतना के साथ तादात्म्य, अभिन्नता और एकत्व रहता है।

आत्म-ज्ञान मानव की सर्वोच्च उपलब्धि नहीं है। जब आत्मा हमारे अन्दर उन्मुक्त रूप से प्रकाशित एवं अभिव्यक्त हो जाती है, तब हमें आध्यात्मिकता की उच्च अवस्था की प्राप्ति होती है। सामान्य रूप से आत्मा, मन, जीवन और शरीर के अधिकार में रहती हैं, और व्यक्ति को अपनी आत्मा का ज्ञान नहीं रहता है। आत्म-ज्ञान एवं आत्म-व्यक्तित्व का क्रमशः मानव में विकास होता है। सच्चिदानन्द के साथ एकत्व की उपलब्धि मानव जीवन से अभी बहुत दूर है। किन्तु व्यक्ति के जीवन का प्रयोजन, अर्थ और मूल्य उस दिव्य अभिन्नता की प्राप्ति है। व्यक्ति के विकास की प्रक्रिया तब तक निरन्तर चलती रहती है, जब तक वह दिव्य अनुभव, चेतना और आनन्द की प्राप्ति नहीं कर लेता है।

व्यक्ति का विकास प्रत्येक जन्म में क्रमशः होता रहता है। पुनर्जन्मों में अनवरत आरोहण होता रहता है। पुनर्जन्म में, मनुष्य का पशु जीवन में

Scanned by TapScanner

प्रतिगमन संभव नहीं है। प्रकृति की शक्तियाँ मानव को उनकी उच्च आध्यात्मिक अवस्थाओं के विकास के लिये प्रेरित करतीं हैं। सम्पूर्ण जगत् ईश्वर से एकत्व के लिए प्रयत्नशील है।

जगत् में आध्यात्मिक विकास अभी भी नहीं हुआ है। इसमें आध्यात्मिक संस्कृति और समाज का विकास अपेक्षित है। जब मानव, आध्यात्मिक चेतना से युक्त होता है, तब उसकी संस्कृति, समाज, मूल्य और आदर्श में आध्यात्मिक रूपान्तर होता है।

अतिमानवीय रूपान्तर में शरीर प्रकाशमय, जीवन अमर एवं मानस सर्वज्ञ हो जाता है। मानव का समग्र विकास होता है। उसकी आत्मा, शरीर, जीवन और मानस का एक साथ अतिमानवीय रूपान्तर होता है। आध्यात्मिक मानव का विकास अतिमानव में होता है, और अन्त में वह सच्चिदानन्द स्वरूप हो जाता है।

मानव विकास में तीन मुख्य रूपान्तर होते हैं। मानव का प्रथम रूपान्तर चैत्य पुरुष में, द्वितीय रूपान्तर आध्यात्मिक पुरुष में, और तृतीय रूपान्तर अतिमानव में क्रमशः होते हैं। मानव के अतिमानव रूपान्तर को क्रमशः तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं, जिसे चैत्य रूपान्तर, आध्यात्मिक रूपान्तर और अतिमानसिक रूपान्तर कहते हैं।

प्रथम चरण में मानव का चैत्य पुरुष में रूपान्तर होता है। उस अवस्था में आत्मा (चैत्य तत्त्व) मनुष्य के शरीर, जीवन तथा मानस को नियंत्रित करता है। दूसरे चरण में चैत्य पुरुष (आत्म-व्यक्तित्व) का आध्यात्मिक पुरुष में रूपान्तर होता है। आध्यात्मिक पुरुष में महान् शक्ति, आनन्द और आध्यात्मिक चेतना के उच्चतर स्वरुप उपलब्ध होते हैं। आध्यात्मिक पुरुष में उच्चतर मानस, प्रदीप्त मानस, अंतः प्रज्ञा और अधिमानस चेतना क्रमशः मानव में सुलभ होते हैं। बुद्धि हमें ज्ञान प्रदान करती है किन्तु वह चेतना के असीम प्रकाश एवं आत्म-ज्ञान को ढक भी लेती है।

विश्व-विकास मानस के स्तर तक पहुँच चुका है। हमें वैज्ञानिक अन्वेषण, आविष्कार, बौद्धिक संस्कृति एवं व्यक्तिवादी नीतिशास्त्र इससे उपलब्ध होते हैं। किन्तु हमें उच्च चेतना, संबोधी, विश्व चेतना और अतिमानवीय चेतना अभी भी सुलभ नहीं है। वे मनुष्य में ढके हुए, आवृत एवं बन्द हैं। संबोधी चेतना सिर्फ कुछ क्षणों के लिये हमें प्राप्त होती है। हम संबोधी चेतना को स्थायी

Scanned by TapScanner

रूप से धारण नहीं कर सकते। आध्यात्मिक चेतना हमारे अन्दर केवल अस्थायी रूप से उपलब्ध हैं। आधुनिक समय में सभी मूल्य, नैतिक आवधारणाएँ, आदर्श, लक्ष्य, इत्यादि, बौद्धिक सिद्धान्तों पर आधारित हैं। आज मानव और समाज पर्याप्त रूप से आध्यात्मिक नहीं है। रहस्यवादी व्यक्तियों का सर्वथा अभाव है। किन्तु मानव का विकास आत्मिक, आध्यात्मिक और अतिमानवीय स्वरुप में क्रमशः हो रहा है। मनुष्य में चेतना और शक्ति का प्रकाशन क्रमशः हो रहा है। उसमें अभी सीमित चेतना और शक्ति है, किन्तु उसमें सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् होने की संभावना है।

मानव से अतिमानव, तथा अतिमानव से सच्चिदानन्द के रूपान्तर में व्यक्ति का क्रमशः विकास होता है। जन्म-पुनर्जन्म के अनवरत उड़ान तथा आरोहण से व्यक्ति का क्रमिक विकास एवं आध्यात्मिक रूपान्तर होता है। मनुष्य की नियति सदैव मनुष्य बने रहना नहीं है, अपितु दिव्य मानव हो जाना है। अन्त में वह सच्चिदानन्द के साथ तादात्म्य प्राप्त करता है। इस प्रक्रिया का मानस को पूर्वानुमान नहीं हो सकता है। हीगल के अनुसार जब किसी पदार्थ का आविर्भाव होता है, तब दूसरे तत्त्व भी तार्किक क्रम से उद्भूत होते हैं, और उनमें से सभी का एक के बाद एक का, आविर्भाव होता है। जिस प्रकार बिजली के बटन दबाने से पूर्व व्यवस्था के अनुसार सभी बल्ब एक-एक करके जलने लगते हैं, उसी प्रकार जैसा कि हीगल कल्पना करते हैं सभी सत्ताएँ एक पूर्व निर्दिष्ट तरीके से विकसित होती हैं। नये, आध्यात्मिक तथा दिव्य तत्त्वों का सृजन होता है। इसके विपरीत श्री अरविन्द के अनुसार विकास की प्रक्रिया सोपान क्रम में होती हैं, किन्तु उसकी दिशा हमारे सीमित मानस से निर्धारित नहीं की जा सकती है। विकास के उद्गमन सच्चिदानन्द की रहस्यमय तथा गोपनीय प्रक्रिया है।

विकास, ईश-अभिव्यक्ति तथा उसके प्रकटीकरण की प्रक्रिया है। सृष्टि तथा विकास में अन्तर है। सृष्टि में, ईश्वर जड़तत्त्व का रूप ग्रहण करता है। विकास उच्चतर, आध्यात्मिक और दिव्य तत्त्वों के प्रकाशन की प्रक्रिया है। जड़तत्त्व में, परमात्मा अन्तर्भूत है, विकास में उसका प्रकाशन होता है। सृष्टि का तात्पर्य ईश्वर (अतिमानस) का निम्न सत्ताओं में निवर्तन और विकास, ईश्वर के उच्च सत्ताओं के प्रकट होने की प्रक्रिया है। सृष्टि में ईश्वर, जगत् में आवृत होता है। जगत्, ईश्वर का छिपा हुआ निम्न अवचेतन तत्त्व है। वह चेतन तत्त्व का बना हुआ है। प्रकृति अचेतन नहीं है,

Scanned by TapScanner

वल्कि वह अवचेतन है जो ईश-तत्त्व से निर्मित है। उसमें ईश-चेतना आवृत है। सृष्टि में ईश्वर अपने को, अपने निम्न तत्त्व से ढक लेता है, और विकास में क्रमशः अपने स्वरूप का प्रदर्शन एवं प्रकाशन करता है। जगत् में ईश्वर अन्तर्लीन है।

विकाश प्रक्रिया में जड़ तत्त्व से जीवन उत्पन्न होता है। जब जीवन का विकास होता है तब वह जड़ तत्त्व का रूपान्तर करता है। जब मानस चेतना का विकास होता है, तब वह शरीर और जीवन दोनों का रूपान्तर करता है। जड़ तत्त्व—टेबुल, कुर्सी, बालू है जिसमें जीवन तत्त्व नहीं है। जब जीवन तत्त्व का मिलन जड़ तत्त्व से होता है तब वह पौधा, वृक्ष, फल, फूल में उसे रूपान्तरित कर देता है। जीवन तत्त्व से जुटा हुआ जड़ पदार्थ उन वस्तुओं से भिन्न है जो उस से पृथक सत्ताएँ हैं। शरीर, खून, स्नायु, अस्थि, इत्यादि, जड़ तत्त्व हैं किन्तु वे जल, अग्नि, हवा, टेबुल, कुर्सी, इत्यादि, से भिन्न हैं। क्योंकि उसमें जीवन तत्त्व का अभाव है। उसी प्रकार जब चेतन तत्त्व का शरीर और जीवन से संयोजन होता है, तब वह उन्हें रूपान्तर कर देता है। चेतन तत्त्व के संयोजन से शरीर और जीवन में अत्यधिक रूपान्तर होता है। मनुष्य में शरीर, जीवन और मानस तत्त्वों का आत्मा के संयोजन से आमूल परिवर्तन होता है। मानव का शरीर और जीवन अत्यधिक रूपान्तरित है, और वह पौधा एवं वृक्ष से भिन्न है।

श्रेष्ठ तत्त्वों के आविर्भाव से निम्न तत्त्वों का रूपान्तर होता है। वे इतने रूपान्तरित हो जाते हैं कि अपने को उच्च सत्ता के अनुकूल बनने में सक्षम होते हैं। जब किसी व्यक्ति के अन्दर ईश्वर का विकास होता है तब उसका पूर्णतः रूपान्तर हो जाता है। व्यक्ति, दिव्य चेतन पुरुष, सर्वज्ञ, सर्व-शक्तिमान् एवं आनन्दपूर्ण हो जाता है, और उसका शरीर प्रकाशमय, जीवन अमर तथा मानस सर्वज्ञ हो जाता है।

'विकास' 'आरोहण' और अवरोहण की दोहरी प्रक्रिया है। निम्न सत्ताएँ उन्मुक्त, ग्रहणशील एवं उच्च सत्ताओं के अनुकूल हो जाती हैं। निम्न सत्ता को उच्च सत्ताओं को ग्रहण करने की क्षमता रखना आवश्यक है। जब जड़ तत्त्व का पर्याप्त रुप से रूपान्तर हो जाता है, तब उसमें जीवन का आविर्भाव होता है। उच्च तत्त्वों के आविर्भाव का तात्पर्य उनका अवतरण है। जब व्यक्ति उदार, उत्कृष्ट ग्रहणशील हो जाता है; तब उसमें आध्यात्मिक चेतना का आविर्भाव होता है। अन्तःप्रज्ञा, प्रदीप्त चेतना तथा अतिमानस, किसी व्यक्ति

Scanned by TapScanner

में अवतरित तभी हो सकती हैं जब उसमें पर्याप्त रुप से विकास, रूपान्तर, ग्राह्यता एवं उन्मुखता सुलभ होते हैं। विकास, उच्च तत्त्वों के अवतरण और निम्न तत्त्वों के आरोहण की दोहरी प्रक्रिया है। जब निम्न सत्ताएँ परिष्कृत हो जाती हैं तथा उच्चतर सत्ताओं को ग्रहण करने की सामर्थ्य विकसित कर लेती हैं, तब उच्च तत्त्व का अवतरण होता है। श्रेष्ठ सत्ताएँ निम्न सत्ताओं में अवतरित होती हैं और उनको रूपान्तरित करने के लिए वे अपनी चेतन-शक्ति का प्रयोग करती है।

विकास में सभी निम्न तत्त्वों का समग्र आरोहण होता है। उनमें संश्लेषण, संयोजन एवं समग्र रूपान्तर होता है। जब व्यक्ति आत्म-व्यक्तित्व को प्राप्त करता है तो मानव में पूर्णतः परिवर्तन हो जाता हैं। आध्यात्मिक व्यक्ति का अन्तिम मानवीय रूपान्तर जब हो जाता है तो तब मानव नहीं रह जाता है, वह दिव्य पुरुष हो जाता है। वह कृष्ण या ईसामसीह या अतिमानव स्वरुप में रूपान्तरित हो जाता है। उसका शरीर ज्योतिर्मय एवं जीवन शाश्वत हो जाता है। मनुष्य और प्रकृति दोनों सच्चिदानन्द के तत्त्व से निर्मित हैं, और वे पूर्ण एवं समग्र विकास की अवस्था में सच्चिदानन्द स्वरुप हो जाते हैं। यदि सच्चिदानन्द का जड़ तत्त्व में अन्तर्लयन है, तब उसे अन्त में पुनः सच्चिदानन्द स्वरुप में रूपान्तरित होना आवश्यक है। यदि विश्व, दिव्य सत्ता से निर्मित है, तो उसे अवश्य ही अपने पूर्ण एवं समग्र विकास में दिव्य बन जाना चाहिए।

श्री अरविन्द के विकास सिद्धान्तों की निम्नलिखित व्याख्या हम प्रस्तुत कर सकते हैं :

१. श्री अरविन्द दैवी विकासवाद की परिकल्पना करते हैं। विकास में चेतना अभिव्यक्त तथा प्रकाशित होती है। यह आध्यात्मिक तत्त्वों के अभिव्यक्ति की प्रकिया है।

२. सृष्टि तथा विकास में भिन्नता है। सृष्टि में परमात्मा अपने को जड़तत्त्व में अन्तर्भूत, अन्तर्लयन करता है। विकास में उसके दिव्य चेतना तथा शक्ति की अभिव्यक्ति होती है। विकास में परमात्मा अपनी चित्-शक्ति तथा आनन्द को अभिव्यक्त करता है। सृष्टि की प्रक्रिया, विकास के पहले आती है, जिसमें सच्चिदान्द स्वयं को जड़ में समाहित करता है।

३. विकास आरोहण और अवरोहण की दोहरी प्रक्रिया है। जीवन का जड़ तत्त्व में अवरोहण होता है। जड़ तत्त्व का जीवन में आरोहण होता

Scanned by TapScanner

है। अतिमानव में मनुष्य का आरोहण उस समय होता है जब मनुष्य अत्यधिक रूपान्तरित एवं आध्यात्मिक हो जाता है, और उसमें अतिमानव का अवतरण होता है। मनुष्य, अभी तक अतिमानस को ग्रहण करने के लिए योग्य नहीं है। अतिमानस का अवतरण अभी तक नहीं हुआ है। मानव का आध्यात्मिक विकास, सच्चिदानन्द की ओर उन्मुख होना है और उन सभी अवरोधों को दूर करना है जो हमारे अन्दर उसकी अभिव्यक्ति को आच्छादित करते हैं। अतिमानस् के अवतरण के पहले मनुष्य को ये तैयारियाँ करनी है। विकास एक दोहरी प्रक्रिया है जिसमें निम्न तत्त्व, उच्च तत्त्वों के साथ संयुक्त होने की आकांक्षा रखते हैं तथा उच्च तत्त्व निम्न तत्त्वों में अवतरित होती है।

४. रूपान्तर, विकास का मुख्य अंग है। जब उच्च तत्त्व निम्न तत्त्वों में अवतरित होता है तब वह उनका रूपान्तर करता है।

उच्च सत्ता, निम्न तत्त्वों का रूपान्तर करती हैं। निम्न सत्ताओं का रूपान्तर उच्च तत्त्व के अवतरण के साथ आरम्भ हो जाता है। जड़ तत्त्व, जीवन के साथ संयुक्त होने से रूपान्तरित हो जाता है। जब चेतना इसके साथ सम्बद्ध होती है तो यह और अधिक रूपान्तरित हो जाता है। यही कारण है कि पृथ्वी, वनस्पति, पशु तथा मनुष्य में विद्यमान जड़ तत्त्व, भिन्न-भिन्न गुण के होते हैं। जड़ तत्त्व के रूपान्तरण के कारण हमारा शरीर पौधों एवं वृक्षों से भिन्न है। जड़ तत्त्व, उच्च सत्ताओं के प्रभाव के कारण अनवरत रुप से रूपान्तर होता रहता है। उसी प्रकार, पौधों का जीवन मानव जीवन से भिन्न है, वे दिव्य प्राणी के जीवन से भी अत्यधिक भिन्न है।

५. श्री अरविन्द विकास के सृजनात्मक सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। हीगल ने रहस्यवादी अनुभूतियों की भर्त्सना की, एवं मानस को सर्वोच्च सत्ता माना। वह विकास के सम्पूर्ण क्रम की मानसिक रुप रेखा प्रस्तुत करते हैं। 'बुद्धि', विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया को निर्धारित करती है। इसके विपरीत श्री अरविन्द कहते हैं कि मानस विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया को निरुपित करने में असमर्थ है। विकास-प्रक्रिया सृजनात्मक है। मानस को विश्व विकास की भावी दिशा का ज्ञान नहीं है। वह विश्व विकास प्रक्रिया को निर्धारित भी नहीं कर सकता है। हीगल के अनुसार हम विकास में क्रम एवं शृंखला पाते हैं, जिसके सोपान बौद्धिक रेखाओं द्वारा खींचे जा सकते हैं। जिस प्रकार बिजली के बटन दबाने से सभी बल्ब, यदि वे उसी प्रकार व्यवस्थित तथा पूर्व-निर्धारित रहते है, तो शृंखलाबद्ध ढंग से

Scanned by TapScanner

एक-एक करके प्रकाशित हो जाते हैं, उसी प्रकार विश्व-विकास के क्रम में सभी सत्ताएँ एक के बाद एक आविर्भूत होती हैं।

श्री अरविन्द कहते हैं कि दिव्य विकास के मार्ग वहुमुखी एवं रहस्यपूर्ण है। जब तक व्यक्ति ईश्वर के साथ एकत्व की प्राप्ति नहीं कर लेता है, तब तक विश्व विकास मानव प्राणी के लिए अज्ञात रहता है। हीगल की अवधारणा है कि विकास के क्रम का स्वरुप त्रयात्मक है। दिव्य सत्ता की कार्य प्रणाली अन्तर्विरोध, द्वन्द और विकास के रुप में होता है। हम दो विपरीत वस्तुओं को अधिष्टित करते हैं और तत्पश्चात् उन दोनों को संश्लेषित करते हैं। श्री अरविन्द पूर्वपक्ष, प्रतिपक्ष तथा संश्लेषण के रुप में विकास के त्रयात्मक क्रम की आलोचना करते हैं। ईश्वर के कार्य बहुमुखी है, जो मनुष्य को अज्ञात रहता है। विकास प्रक्रिया बहुमुखी और स्वतंत्र है। ईश्वरीय विकास को सीमित त्रयात्मक गति में आबद्ध नहीं किया जा सकता। जबकि हीगल प्रत्ययवादी है श्री अरविन्द अत्यधिक आध्यात्मिक है। सीमित मानस के द्वारा आध्यात्मिक विकास का पूर्वज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है। ईश्वर की स्वतंत्र गति को मानस के तर्क कोशल के द्वारा नियंत्रित तथा निर्देशित नहीं किया जा सकता है। विकास प्रक्रिया स्वतंत्र, रहस्यपूर्ण, आपातिक तथा बहु-मुखी है।

६. विकास का उद्देश्य व्यक्ति तथा विश्व का दिव्यीकरण है। जगत् ईश्वर के साथ एकत्व के लिए द्रुत गति से अग्रसर हो रहा है। विश्व के परिवर्तन निरर्थक नहीं है, अपितु ईश्वर की प्राप्ति के लिए वे प्रकृति के प्रयास को प्रकट करते हैं। विश्व-विकास, जगत् के दिव्यीकरण की प्रक्रिया है। सिर्फ़ आत्माएँ ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण जगत् ईश्वर के साथ संयुक्त होने के लिये प्रयत्नशील है। विश्व-विकास की प्रक्रिया ईश्वर के लिये क्रीड़ा मात्र है। अभिव्यक्ति के आनन्द के अतिरिक्त ईश्वर का और कोई प्रयोजन नहीं है। ईश्वर के लिये विश्व की सृष्टि उसकी क्रीड़ा है। ईश्वर स्वयं को परिपूर्ण नहीं करता है, क्योंकि वह सदैव पूर्ण, शाश्वत और आनन्द स्वरुप है। ईश्वर के लिए विश्व विकास एक क्रीड़ा है। जिस प्रकार हर्ष के अतिरिक्त 'खेल' का कोई प्रयोजन नहीं रहता है, उसी प्रकार विश्व-विकास ईश्वर को हर्ष प्रदान करता है। यह ईश्वर की लीला है। अभिव्यक्ति के आनन्द के अतिरिक्त सृष्टि का ईश्वर के लिए कोई प्रयोजन नहीं है।

Scanned by TapScanner

७. श्री अरविन्द विश्व-विकास के तीन अवस्थाओं का उल्लेख करते हैं। प्रथम, सृष्टि के आरम्भ में हम सिर्फ़ भौतिक तत्त्वों, जैसे पृथ्वी, अग्नि, जल, इत्यादि, को पाते हैं, जिसमें जीवन या चेतना नहीं रहती है। दूसरी अवस्था में हम जीवन का विकास पाते हैं। प्रकृति आज विकास की जिस अवस्था तक पहुँची है, वह मानस की अवस्था है। मानस आज विकास का सर्वोच्च आविर्भूत तत्त्व है। हम तर्क बुद्धि, विज्ञान, औद्योगीकरण, बौद्धिक संस्कृति, सभ्यता और यंत्रीकरण का उल्लेख करते हैं, क्योंकि बुद्धि मनुष्य में सर्वोच्च तत्त्व है।

मानस की अवस्था व्यक्ति के ज्ञान की अवस्था नहीं है। मनुष्य अभी भी अज्ञानी है। उसकी बुद्धि दुर्बल, सीमित, भ्रान्तिमूलक तथा अल्प ज्ञान रखती है। यह अज्ञान की अवस्था है। लेकिन, विश्वन्विकास प्रकृति कोअ ज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाता है। विकास का परम लक्ष्य प्रकृति का 'परा प्रकृति' या दिव्य प्रकृति में रूपान्तर है। यह अविकसित तथा अपूर्ण जगत् है। इसमें मृत्यु, रोग तथा यातना है। परा प्रकृति तथा दिव्य विश्व में सिर्फ़ आनन्द, हर्ष, पूर्णता, अमरत्व है जिसमें ईश्वर का निवास रहता है।

Scanned by TapScanner